रूसी कहानी

मिखाइल शोलोख़ोव

हरामी

हरामी (रूसी कहानी) : मिखाइल शोलोख़ोव

हरामी (रूसी कहानी) : मिखाइल शोलोख़ोव

Harami (Russian Story in Hindi) : Mikhail Sholokhov

मीश्का ने स्वप्न में देखा कि दादा ने बगीचे में चेरी की एक अच्छी कमची काट दी है। वे कमची हिलाते हुए उसकी तरफ़ आ रहे हैं और डाँटते हुए कह रहे हैं :

“हाँ, इधर तो आ ज़रा मिखाईल फ़ोमीच! अगर तेरे चूतड़ों पर मार-मारकर यह कमची न तोड़ी तो कहना!"

“किसलिये दादा?" मीश्का ने पूछा।

“इसलिये किं तूने कलँगीवाली मुर्गी के दरबे से सारे अण्डे चम्पत कर दिये और उन्हें ले गया हिण्डोले पर झूलने के लिए!"

“दादा, इस साल तो मैं हिण्डोले पर एक बार भी नहीं झूला!" मीश्का डर क मारे चीख उठा।

मगर दादा ने अकड़कर अपनी दाढ़ी पर गम्भीर ढंग से हाथ फेरा

और पाँव पटककर धमकाते हुए बोले :

"शरारती कहीं का! कर पाजामा ढीला, तेरी चमड़ी उधेड़ूँ!"

मीश्का चीख उठा और उसकी आँख खुल गई। उसका दिल ज़ोर से धक-धक कर रहा था मानो सचमुच ही कमचियों से खबर ली गई हो। बड़ी होशियारी से उसने बाईं आँख खोली। देखा कि घर में उजाला हो चुका है। सुबह की किरणें खिड़कियों से झाँक रही थीं। मीश्का ने सिर उठाया तो उसे ड्योढ़ी में से कई आवाजें सुनाई दी-माँ खुशी से चीख रही थी, कुछ कहती जा रही थी, हँसी के मारे उसका बुरा हाल हुआ जा रहा था, दादा खाँस रहे थे और एक अजनबी-सी आवाज़ और भी सुनाई दे रही थी, "बू-बू-बू..."

मीश्का ने आँखें मलीं और देखा-दरवाज़ा खुला, ज़ोर से बन्द हुआ, दादा लपककर भीतर आये, उछलते हुए। उनका चश्मा उनकी नाक पर नाच रहा था। मीश्का ने सोचा कि भजनीकों के साथ पादरी आये होंगे (ईस्टर के दिनों में जब पादरी आते थे तो दादा इसी तरह भागे-भागे फिरा करते थे)। दादा के पीछे-पीछे एक लम्बा-तडंगा और हट्टा-कट्टा फ़ौजी अन्दर आया। वह काला फ़ौजी कोट और फीतों वाली टोपी पहने था। माँ उसके गले से लिपटकर रो रही थी।

घर के ठीक बीच में इस अजनबी ने माँ को झटककर गले से अलग किया और ऊँची आवाज़ में पूछा :

“कहाँ है मेरी सन्तान?"

मीश्का घबराकर कम्बल के नीचे दुबक गया। "तुम क्या सो रहे हो? अरे बेटा, तेरा बाप फ़ौज से आया है," माँ ने पुकारकर कहा।

मीश्का आँख भी न झपक पाया कि फ़ौजी ने उसे जा दबोजा, छत तक उछाल दिया और फिर सीने से चिपका लिया। वह जब उसे अपनी लाल-लाल मूंछों से प्यार करने लगा तो बस कुछ न पूछिये-होंठों, गालों और आँखों की मुसीबत ही आ गई। मूंछे उसकी कुछ-कुछ नम थीं, नमकीन-सी। मीश्का ने छूट निकलने की पूरी कोशिश की, मगर उसकी एक न चली।

"अरे वाह, तू तो अच्छा-खासा बोल्शेविक हो गया है! जल्द ही बाप से बाजी मार जायेगा! हो-हो-हो!" बाप ज़ोर से हँसा और लगा मीश्का को झुलाने-कभी हाथों पर बिठा चक्कर दिलाये और फिर कभी छत तक उछाल दे।

मीश्का सहन करता रहा, सहता रहा और फिर दादा की तरह उसने भौहें सिकोड़ी और शरीर को अकड़ा लिया। उसने बाप की मूंछे पकड़ लीं।

“छोड़ दो मुझे बापू!"

"नहीं छोड़ने का!"

“छोड़ दो! मैं बड़ा हो गया हूँ और तुम मुझे बिल्कुल छोटे बच्चे की तरह उछाल रहे हो!"

बाप ने बेटे को घुटनों पर बिठा लिया और मुस्कराते हुए पूछा :

“कितने साल का हो गया है रे पिस्तौल तू?"

"आठवाँ चल रहा है," सिकोड़ी हुई आँखों से देखते हुए मीश्का ने अनिच्छा से कहा।

“याद है न बेटे कि दो साल पहले जब मैं आया था तो कैसे मैंने तुझे जहाज बना-बनाकर दिये थे? कैसे हमने तालाब में वे जहाज चलाये थे?"

“याद है!" मीश्का ने झट से जवाब दिया और कुछ झिझकते हुए अपनी दोनों बाँहें बाप के गले में डाल दीं।

बस फिर क्या था खूब रंग जमा। बाप ने मीश्का को कन्धे पर बिठाया, पैरों से पकड़ा और कमरे में दे चक्कर पर चक्कर। कभी वह दुलकी चले तो कभी घोड़े की तरह हिनहिनाये। मीश्का तो खुशी के मारे हाँफने लगा। माँ उसकी आस्तीन खींचने और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर कहने लगी :

“अरे जा, बाहर जाकर खेल!.. अरे सुनता नहीं दुष्ट, कह रही हूँ कि बाहर जाकर खेल!" फिर उसने बाप से कहा, “छोड़ दो अब इसे फोमा अकीमिच! छोड़ भी दो!... वह तो तुम्हें, मेरे प्रिय को, आँख भरकर देखने भी नहीं देगा। दो बरस से आँखें तरस गई हैं तुम्हें देखने को, और तुम हो कि इसी में उलझे हुए हो!"

बाप ने मीश्का को नीचे उतार दिया और कहा :

“जा भाग, जाकर अपने दोस्तों से खेल-कूद । जब लौटेगा तो तुझे मिठाई खिलाऊँगा।"

मीश्का ने दरवाज़ा खोला और बाहर! पहले तो यह ख्याल आया कि ड्योढ़ी में खड़ा रहकर कान लगाये और सुने कि कमरे में क्या बातचीत होती है। मगर तभी याद आया कि बाप के घर लौटने की खबर तो किसी भी बच्चे को मालूम नहीं। ऐसी खबर न बताई जाये भला? और बस वह नज़र आया अहाते में, और फिर घर के बगीचे में लगे आलुओं के पौधों को फाँदता हुआ तालाब पर जा पहुंचा।

तालाब के ठहरे हुए और बदबूदार पानी में मीश्का ने गोते पर गोते लगाये। फिर वह रेत पर लोटा-पोटा और उसने आखिरी बार गोता लगाया। फिर वह एक टाँग पर कूदा और उसने पाजामा ऊपर खींचा। वह घर जाने को बिल्कल तैयार ही था कि पादरी का बेटा वीत्का उसके पास आ पहुंचा।

“मीश्का, थोड़ी देर और रुक जा! आ, हम साथ-साथ गोते लगायें और फिर हमारे घर चलकर खेलेंगे। माता जी तुझे हमारे घर आने से नहीं रोकतीं।"

मीश्का ने खिसक रहे पाजामे को बायें हाथ से खींचा, कन्धे पर की पट्टी ठीक की और कहा :

"मैं तेरे साथ खेलना नहीं चाहता। तेरे कान सड़े रहते हैं!"

वीत्का ने बदले की भावना से आँख सिकोड़ी और अपने हड़ीले कन्धे से खींचकर कमीज उतारते हुए कहा :

“यह तो कनपेड़ा है। पर तू किस मुँह से बात करता है रे गँवार,

तेरी माँ ने तो तुझे बाड़ के नीचे जना था!"

"तू देखने गया था न?"

“सुना है मैंने तो। हमारी बावर्चिन ने बताया था मेरी माता जी को।"

मीश्का ने पाँव से मिट्टी कुरेदी और वीत्का को सिर से पाँव तक देखा।

"बकवास करती है तेरी माता जी! मेरे बापू तो लड़ाई लड़कर आये हैं और तेरा बाप हरामखोर है, बैठा-बैठा पराया माल हड़पता रहता है!"

"हरामी!" पादरी के बेटे ने रुआँसा होकर कहा।

मीश्का ने जैसे ही पानी से घिसा हुआ-सा एक पत्थर उठाया कि पादरी का बेटा अपने आँसुओं को रोकता हुआ मधुरता से मुस्कराया :

"लड़ नहीं मुझ से मीश्का, बुरा नहीं मान! अगर तू चाहे तो मैं तुझे अपना चाकू दे सकता हूँ। अच्छे लोहे का बना हुआ है वह!"

मीश्का की तो खुशी से बाछे खिल गईं। उसने पत्थर एक तरफ़ को फेंक दिया। मगर तभी उसे अपने बाप के घर लौटने की बात याद आई। उसने गर्व से कहा :

"मेरे बापू तेरे चाकू से भी बढ़िया चाकू लाये हैं मेरे लिये लड़ाई के मोर्चे से!"

“झू-ऊ-ठ बोलता है!" विश्वास न करते हुए वीत्का ने “झू' अक्षर को बहुत खींचकर कहा।

“तू खुद है झूठा!.. जब कह रहा हूँ कि लाये हैं तो इसका मतलब है कि लाये हैं! सचमुच की बन्दूक भी लाये हैं..."

“अरे वाह, तब तो तेरे बड़े ठाठ हैं!" वीत्का ने उसकी खिल्ली उड़ाई।

"उनके पास तो एक टोपी भी है जिस पर फीते लटके हुए हैं और सुनहरे अक्षर लिखे हैं, ठीक वैसे ही, जैसे तेरी किताबों में हैं!"

वीत्का देर तक सोचता रहा कि क्या कहे कि मीश्का दंग रह जाये। उसने माथे पर बल डाला और अपना पेट खुजाया। आखिर बात सूझी।

"मेरे पिता जी तो बस जल्दी ही बड़े पादरी बनने वाले हैं और तेरा बाप-वह तो था चरवाहा, ढोर चराता था। अब बोल?..."

मीश्का तंग आ गया था। वह मुड़ा और बगीचे की तरफ़ चल दिया। पादरी के बेटे ने उसे पुकारा :

“मीश्का, रे मीश्का! सुन तुझे एक बात बताऊँ!

"बता।"

“यहाँ आ, मेरे पास!"

मीश्का उसके पास गया और आशंका से उसे देखने लगा :

“हाँ तो बता!" पादरी का बेटा अपनी पतली और टेढ़ी-मेढ़ी टाँगों

से रेत पर नाचा, मुस्कराया और मीश्का को चिढ़ाने की नीयत से ऊँचे स्वर में कह उठा :

"तेरा बाप कम्युनिस्ट है! जैसे ही तू मरेगा और तेरी आत्मा उड़कर आसमान में पहुँचेगी तो भगवान कहेगा-'चूँकि तेरा बाप कम्युनिस्ट था, इसलिये तेरी जगह जहन्नुम में है! वहाँ शैतान तुझे पकड़कर कड़ाही में भूनना शुरू कर देंगे!"

“और तू यह समझता है कि शैतान तुझे छोड़ देंगे?"

"मेरे पिता तो पादरी हैं!.. तू बिल्कुल बुद्धू है, अनपढ़ गँवार है! कुछ भी तो नहीं समझता..."

मीश्का को डर ने आ दबोचा। वह मुड़ा और चुपचाप घर की ओर दौड़ चला।

अहाते की बाड़ के करीब पहुँचकर वह रुक गया। वहाँ से उसने चीखकर पादरी के बेटे को आवाज़ दी और चूसा दिखाते हुए कहा :

"अभी जाकर पूछता हूँ दादा से। अगर झूठ निकला तो बस फिर कभी हमारे अहाते के पास से मत गुजरना!"

मीश्का बाड़ लाँघकर अहाते में पहुँचा, घर की तरफ़ लपका। उसकी आँखों के सामने घूम रही थी कड़ाही और कड़ाही में भूना जा रहा था वह खुद मीश्का... वह गर्म-गर्म कड़ाही में बैठा है और चारों ओर मलाई उभड़-उभड़ भाप छोड़ रही है। उसे डर के मारे पीठ पर चींटियाँ-सी रेंगती अनुभव हुईं। जल्दी से जाना

चाहिये दादा के पास, पूछना तो चाहिये...

फाटक में तो जैसे जान-बूझकर सूअर फँसा हुआ था। उसकी गर्दन एक तरफ़ थी और बाकी हिस्सा था दूसरी तरफ़। वह खरों को ज़मीन पर टेके था, दुम हिलाता हुआ बुरी तरह चिल्ला रहा था। मीश्का ने चाहा कि सूअर को मुसीबत से बचायें। उसने फाटक खोलना चाहा, मगर सूअर की गर्दन फँसी हुई थी उसमें। वह बहुत ज़ोर से खरखराने लगा। वह सुअर की पीठ पर चढ़ बैठा। सअर ने अपना पूरा ज़ोर लगाया. फाटक टूटकर अलग जा गिरा। सूअर वहाँ से भागा, अहाता लाँघता हुआ खलिहान की ओर बढ़ चला। मीश्का ने उसके पेट में एड़ियाँ मारनी शुरु की। सूअर उड़ चला, मीश्का के बाल हवा में लहराने लगे। मीश्का खलिहान के पास पहुँचकर सूअर की पीठ से कूदकर नीचे उतरा। उसने देखा कि दादा ड्योढ़ी की देहरी पर खड़े हैं और उँगली से इशारा करके उसे बुला रहे हैं।

"इधर आना ज़रा मेरे पास, मेरे बेटे!"

मीश्का समझ न पाया कि दादा उसे क्यों बुला रहे हैं। मगर तभी उसे नरक की कड़ाही की याद आ गई। वह तेज़ी से भागा दादा की तरफ़।

"दादा, प्यारे दादा, क्या आसमान पर शैतान होते हैं?"

“ठहर, अभी चखाता हूँ तुझे शैतान का मज़ा! अरे ओ पाजी, तू सूअर पर क्यों चढ़ा फिर रहा था?"

दादा ने मीश्का के बाल पकड़ लिये और आवाज़ देकर घर के अन्दर से माँ को बुलाया।

"ज़रा बाहर आकर अपने लाड़ले को तो देखो!"

माँ हड़बड़ाई हुई आई।

"क्यों तुम उसे डाँट-डपट रहे हो?"

"क्यों डाँट-डपट रहा हूँ? यह हजरत अहाते में सूअर की सवारी कर रहे थे, धूल फाँकते फिर रहे थे!"

“अरे हाय! तू गाभिन मादा-सूअर पर चढ़ा फिर रहा था?" माँ तो चीख उठी।

मीश्का अपनी सफाई देने को मुँह भी न खोल पाया कि दादा ने कमर से पेटी खोल ली। बायें हाथ से वे कमरबन्द थामे रहे कि कहीं पाजामा न फिसल जाये और दायें हाथ से उन्होंने मीश्का का सिर अपने घुटनों में दबाया और लगे मरम्मत करने। पिटाई करते जाते थे और साथ ही डाँटते जाते थे :

“खबरदार जो अब फिर कभी सूअर की सवारी की... खबरदार!..."

मीश्का का मन हुआ कि ज़ोर से चीखे, मगर दादा ने डाँटा :

“हाँ तो तू कुत्ते का पिल्ला, सोने नहीं देगा अपने बापू को? वह थका-हारा आया है सफर से। ज़रा आँख लगी है और अब तू गला फाड़ेगा?"

मजबूर होकर चुप रह जाना पड़ा। मीश्का ने दादा को लात मारने की कोशिश की, मगर यह कोशिश भी कारगर न हुई। माँ ने दादा से मीश्का का पिण्ड छुड़ाया और मकान के अन्दर धकेल दिया।

"बैठ यहाँ, तेरी माँ को शैतान ले जायें! ऐसी चमड़ी उधेडूंगी तेरी कि दादा की मार भूल जायेगा!"

दादा रसोईघर में तख्ते पर बैठे थे। वे रह-रहकर मीश्का की पीठ को देख रहे थे। मीश्का दादा की ओर घूमा, मुट्ठी से मलकर उसने आखिरी आँसू पोंछा और दरवाजे के साथ पीठ सटाकर कहा :

“अच्छा दादा... तुम भी याद रखना!"

"अरे पाजी, तू क्या अपने दादा को डराना-धमकाना चाहता है?"

मीश्का ने देखा कि दादा फिर से पेटी खोलने लगे हैं। उसने भी होशियारी से थोड़ा-सा दरवाज़ा खोल लिया।

"हाँ, तो तू मुझे डराने-धमकाने चला है?" दादा ने फिर से पूछा।

मीश्का झटपट दरवाज़े के पीछे गायब हो गया। वह दरवाज़े की दरार के साथ आँख लगाकर दादा की हर गतिविधि को ध्यान से देखने लगा। फिर बोल उठा :

“कुछ दिन और ठहर जाओ, कुछ दिन और, दादा जी!.. फिर तुम्हारे दाँत गिर जायेंगे। तब मैं तुम्हें कौर चबा-चबाकर नहीं दूंगा!... तब तुम मुझ से कहना भी नहीं!"

दादा बाहर चौखट पर आये। देखा कि बगीचे में पटुआ के झबरीले पौधों के बीच से मीश्का का सिर और नीली सलवार झलक दिखा रही है। दादा देर तक उसे बैसाखी दिखा-दिखाकर धमकाते और दाढ़ी में अपनी मुस्कान छिपाते रहे।

***

बाप के लिए मीश्का-मीश्का था। माँ उसे बुलाती थीं- मीन्युश्का। दादा को जब प्यार आता तो वह उनकी नज़र में शरारती लड़का होता। बाकी समय जब दादा की मुरझाई-सी सफेद भौंहें आँखों पर लटकी-सी रहतीं तो वह उसे पुकारते और कहते, “अरे मिखाईल फोमीच इधर आ, ज़रा तेरे कान गर्म कर दूँ!"

बाकी लोग, जैसे कि इधर-उधर की बातें उड़ानेवाली पड़ोसिनें, छोकरे और गली-मोहल्लेवाले उसे मीश्का या “हरामी" कहकर बुलाते।

माँ कुँवारी ही थी कि मीश्का ने जन्म लिया था। महीने भर बाद बेशक फोमा चरवाहे से उसकी शादी हो गयी थी। उसी का यह बच्चा था। मगर बदनामी भरा यह "हरामी" शब्द सदा के लिये मीश्का के नाम के साथ जुड़कर रह गया था।।

मीश्का सीख-सलाई-सा था। वसन्त के दिनों में मीश्का के बाल खिलते हुए सूरजमुखी के फूल की पंखुड़ियों की तरह पीले पड़ जाते। जून महीने का सूरज उन्हें झुलसा कर । उलझे-झबरीले बना देता। मीश्का के गाल चिड़िया के अण्डों जैसे लगते, जहाँ-

तहाँ बुन्दकियाँ पड़ी हुईं। रही नाक तो वह तेज़ धूप और तालाब में बार-बार गोते लगाने से छिली रहती और उसकी चमड़ी फटी रहती। इस धनुषाकार टाँगोंवाले मीश्का की सिर्फ़ आँखें ही सुन्दर थीं। तंग पपोटों में से उसकी नीली और शरारती आँखें यों चमकतीं जैसे नदी में बर्फ के वे टुकड़े जो अभी पिघले न हों।

बाप को मीश्का की दो चीजें पसन्द थीं-एक तो उसकी सुन्दर आँखें और दूसरा उसका घड़ी भर को भी टिककर न बैठना। फ़ौज से वह उसके लिये दो उपहार लाया था-एक तो मीठी टिकिया जो काफ़ी समय तक रखी रहने के कारण सूखकर पत्थर हो गई थी और दूसरा, थोड़ी-सी घिसी हुई ऊँची जूतियों का जोड़ा। जूतियाँ तो माँ ने तौलिये में लपेटकर सन्दक में रख दी और टिकिया को मीश्का ने देहली पर रखकर हथौड़े से तोड़ा और उसका आखिरी कण तक हड़प गया।

दूसरे दिन जैसे ही सूरज निकला कि मीश्का भी उठ बैठा। उसने लोहे के पतीले में से चुल्लू भर गर्म पानी लिया और पिछले दिन का मैल मैले-कुचैले गालों पर फैला डाला। मुँह सुखाने के लिए वह बाहर दौड़ गया।

माँ गाय की सेवा में जुटी हुई थी, दादा पुश्ते पर बैठे थे। मीश्का पर नज़र पड़ते ही उसे आवाज़ दी:

“अरे शरारती, जा भागकर खत्ती में जा। वहाँ मुर्गी कुड़कुड़ाई है, अण्डा दिया होगा।"

मीश्का दादा का हुक्म बजाने को सदा तैयार रहता था-हाथों-पैरों

के बल आन की आन में जा पहुँचा खत्ती में। इधर से गया, उधर से रेंगा और यह जा और वह जा! भाग लिया तालाब की ओर! भागता था और देखता जाता था कि कहीं दादा तो नहीं देख रहे हैं? बाड़ तक पहुँचते बिच्छू बूटी ने काट लिया, टाँगें जैसे जल ही तो गईं। दादा बैठे रहे राह देखते हुए, खीझते हुए। जब सब्र का प्याला छलक गया तो खुद घुसे खत्ती में। जगह-जगह मुर्गियों की बीट चिपक गई। भीतर घुप अँधेरा था। बड़े मियाँ टटोलते हुए जो आगे बढ़े तो शहतीरों से ज़ोर से सिर टकराया। आखिर रेंगकर दूसरी ओर के सिरे पर जा पहुंचे।

“अरे ओ उल्लू रे, मीश्का, क्या कहूँ तुझे!... ढूँढ़ रहा है, ढूँढ़ रहा है और कुछ पल्ले नहीं पड़ेगा तेरे!... अरे मूर्ख, मुर्गी क्या वहाँ आकर अण्डा देगी? यहीं पत्थर के नीचे होगा अण्डा। तू कहाँ रेंगता फिर रहा है शरारती?"

दादा कहते गये, मगर जवाब में छाई रही खामोशी। उन्होंने अपने कपड़ों से बीट झाड़ी और खत्ती से निकल आये। आँखें सिकोड़कर देर तक तालाब की ओर देखते रहे। आखिर मीश्का को देख लिया और हताश होकर हाथ झटक दिया... बालकों ने तालाब के निकट मीश्का को घेर लिया और लगे पूछने :

"तेरा बाप लड़ाई पर गया था?"

“गया था।"

"क्या करता रहा वह वहाँ?"

“करता क्या रहा, लड़ता रहा!"

"तू बकता है! वह वहाँ जूएँ मारता और रसोईघर में हड्डियाँ चूसता रहा!.."

बालकों ने ज़ोर का ठहाका लगाया, मीश्का के जिस्म में उँगलियाँ भोंकने और उसके गिर्द उलछने-कूदने लगे। खीझ और अपमान से मीश्का की आँखों में आँसू आ गये। तिस पर पादरी के बेटे वीत्का ने एक और तीर छोड़ा :

"तेरा बाप कम्युनिस्ट है न?" उसने पूछा।

“मालूम नहीं...”

"मैं जानता हूँ कि वह कम्युनिस्ट है। मेरे पिताजी आज सुबह कह रहे थे कि तेरे बाप ने शैतानों के हाथ अपनी आत्मा बेच दी है। उन्होंने यह भी कहा था कि सभी कम्युनिस्टों को शीघ्र ही फाँसी दी जायेगी!"

बालक चुप हो गये, मीश्का का दिल बैठ गया। मेरे बापू को फाँसी दी जायेगी-पर किस लिये? उसने ज़ोर से दाँत पीसे और कहा :

"मेरे बापू के पास बहुत बड़ी बन्दूक है, सभी बुर्जुआ को उड़ा देगा!"

वीत्का ने एक पैर आगे की तरफ़ बढ़ाकर बड़ी शान से बोला :

"कुछ नहीं बनेगा उसके किये-धरे! मेरे पिताजी उसे आशीष ही नहीं देंगे। बिना आशीष के वह कुछ नहीं कर पायेगा!"

दुकानदार के बेटे प्रोश्का ने नथुने फुलाकर मीश्का की छाती में मुक्का मारा और चीखकर कहा :

“तू अपने बाप की शान में मत रहना! जब क्रान्ति हुई थी तो वह मेरे बाप का माल उठा ले गया था। मेरे पिता ने कहा था-'सरकार लौट आयेगी तो मैं चरवाहे फोमा को ही सबसे पहले खत्म करूँगा!"

प्रोश्का की बहन नताशा ने पैर पटककर कहा : "करो इसकी मरम्मत, बच्चो, देख क्या रहे हो?"

"मारो इस कम्युनिस्ट के बेटे को!"

"हरामी!"

"प्रोश्का, दिखाओ इसे तारे!" प्रोश्का ने कमची घुमाई और कसकर मीश्का के कन्धे पर रसीद की। पादरी के बेटे वीत्का ने लँगड़ी मारी और मीश्का रेत पर चारों खाने चित हो गया।

बालक खूब ज़ोर से चिल्लाये और मीश्का पर टूट पड़े। नताशा अपनी बारीक आवाज़ में शोर मचाती हुई झपटी और मीश्का की गर्दन नोचने लगी। किसी ने कसकर मीश्का के पेट में लात जमाई।

मीश्का ने ज़ोर लगाकर प्रोश्का को अपने ऊपर से धकेला, उछलकर खड़ा हुआ और शिकारी कुत्तों से बचकर भागते हुए खरगोश की तरह घर की तरफ़ झपटा। उसके पीछे सीटियाँ बजती रहीं, उस पर पत्थर फेंका गया। मगर उसका पीछा किसी

ने नहीं किया।

मीश्का ने पटुए के हरे भरे कुंज में पहुँचकर ही दम लिया। पटुए के पौधे उसके सिर से ऊँचे थे। वह सीली और सोंधी ज़मीन पर बैठ गया और नोची-खसोटी हुई गर्दन से खून साफ़ करते हुए रो पड़ा। ऊपर, पत्तियों के बीच से धूप छन रही थी। धूप ने उसके गालों से आँसू सोख लिये और उसके उठे हुए लाल बालों को माँ की तरह प्यार से चूमती रही। . मीश्का देर तक इसी तरह वहाँ बैठा रहा। जब आँखें सूख गईं तो वहाँ से उठा और चुपचाप आँगन में पहुंचा।

मीश्का देर तक इसी तरह वहाँ बैठा रहा। जब आँखें सूख गईं तो वहाँ से उठा और चुपचाप आँगन में पहुंचा।

पिता छानी में बैठा हुआ छकड़े के पहिये को तेल लगा रहा था। उसकी टोपी खिसककर मुद्दी पर पहुँच गई थी, फीते लटक रहे थे और वह सफ़ेद धारियों वाली नीली कमीज़ पहने था। मीश्का नज़र बचाकर पिता के पास पहुँचा और छकड़े के क़रीब आकर खड़ा हो गया। देर तक वह चुप्पी साधे रहा। फिर उसने हिम्मत करके बाप का हाथ छुआ और फुसफुसाते हुए पूछा :

"बापू, तुम लड़ाई पर गये थे तो वहाँ क्या करते रहे?"

अपनी लाल मूंछों के बीच मुस्कराते हुए पिता ने जवाब दिया :

"लड़ाई लड़ता रहा बेटे!"

"मगर बालक... बालक कहते हैं कि तुम वहाँ सिर्फ जुएँ मारते

रहे!"

आँसुओं से मीश्का का गला रुंध गया। बाप हँस दिया और उसने मीश्का को हाथों पर उठा लिया।

“मेरे बेटे, वे बकते हैं! मैं तो जहाज पर था। उस बड़े जहाज पर जो समुद्र में आता है। मैं उसी में था और फिर लड़ने गया।"

"किससे तुमने लड़ाई लड़ी?"

"धन-दौलतवालों से, मेरे लाल! तू अभी बहुत छोटा है। इसलिये मुझे लड़ना पड़ा तेरे बजाय। इसके बारे में तो गाना भी गाया जाता है।

बाप मुस्कराया, मीश्का की ओर देखते हुए पैरों से ताल देकर गाने लगा :

अरे मिखाईल, मेरे बेटे,
मत जा रे तू लाम पर
मेरी साँस अभी बाकी है
जीवन की मैं सभी बहारें देख रहा हूँ,
तू तो खिलता फूल अभी है
अभी तुझे शादी करनी है
मेरे लाल, मेरे लाल...

बालकों की हरकत से मीश्का को जो दुख हुआ था, अब वह उसे भूल गया। अब उसे इस बात पर हँसी आ गई कि बाप की मूंछे उसके होंठों पर पूँज के उन रेशों की भाँति अकड़ी हुई थीं

जिनसे माँ झाड़ू बनाती है। मूंछों के नीचे जब होंठ हिलते-डुलते थे तो देखने से हँसी आती थी और जब मुँह खुलता था तो अन्दर एक गोल और काला-सा छेद नज़र आता था।

“तू इस वक्त मेरे काम में खलल नहीं डाल मीन्का," बाप ने कहा, "अभी मुझे छकड़े की मरम्मत कर लेने दे और रात को सोते वक्त मैं तुझे लड़ाई की सभी बातें सुनाऊँगा।"

***

दिन लम्बा होता चला गया, स्तेपी से सुनसान लम्बे रास्ते की तरह। सूरज ने अपना किरणजाल समेटा और घोड़ों का झुण्ड गाँव से गुजर गया। धूल बैठ गई और सँवलाये हुए आकाश से पहले सितारे ने लजाते हुए धरती की ओर देखा।

मीश्का के मन को चैन नहीं था, और माँ जैसे कि जान-बूझकर देर करती जा रही थी। वह देर तक दूध दुहती रही, देर तक उसे छानती रही, फिर तहखाने में गई तो वहीं घण्टा-भर गुम रही। मीश्का को करार नहीं था, वह माँ के इर्द-गिर्द चक्कर काटता रहा था।

“जल्द ही खाना दोगी न माँ?"

“ज़रा सब्र कर रे! मिल जायेगा खाना, मरा क्यों जा रहा है!"

मगर मीश्का उसके पीछे-पीछे लगा रहा। माँ तहख़ाने में जाये तो वह भी उसके पीछे, माँ रसोईघर में जाये तो वह भी वहाँ हाजिर। जोंक की तरह चिपक गया माँ का दामन पकड़े।

"माँ... माँ... ज़रा जल्दी से खाना दे दो!”

“अरे कह तो दिया! पेट में आग लगी है तो जा, जाकर रोटी का टुकड़ा लेकर खा ले।"

मगर मीश्का सुनी-अनसुनी करता रहा। माँ ने गुद्दी पर एक चपत जमा दिया, मगर इससे भी कोई फर्क नहीं पड़ा।

मीश्का ने रात का खाना हड़बड़ी में जैसे-जैसे गले के नीचे उतारा और फटाफट जा पहुँचा सोने के कमरे में। पाजामा उतारकर उसने सन्दूक के पीछे काफ़ी दूर फेंक दिया और बिस्तर में माँ की रजाई के नीचे जा दुबका। रजाई रंगबिरंगी कपड़ों के टुकड़ों को जोड़कर बनाई गई थी। बिस्तर में जा लेटा और मन में इस बात की बेचैनी बनी हुई थी कि कब बाप आये और लड़ाई का हाल सुनाये।

दादा देव मूर्तियों के सामने घुटने टेके हुए प्रार्थना कर रहे थे। मीश्का ने सिर ऊँचा किया। देखा कि दादा बड़ी कठिनाई से और बायें हाथ की उँगलियों से सहारा लेकर झुके और इतना झुके कि उनका सिर फर्श से जा टकराया। मीश्का ने दीवार पर कुहनी मारी-ठक!

दादा फिर फुसफुसाते हुए प्रार्थना करते और फ़र्श पर माथा टेकते। मीश्का भी दीवार को ठकठकाता रहा। दादा खीझ उठे, मीश्का की तरफ़ मुड़े और डाँटते हुए बोले :

“ठहर शैतान अभी बताता हूँ तुझे! क्षमा करना मुझे भगवान!

नहीं मानता तो अभी तेरी मरम्मत करता हूँ!"

पिटाई शुरु होने वाली ही थी कि पिता ने भीतर कदम रखा।

"तू माँ के बिस्तर में क्यों जा घुसा रे मीश्का?" बाप ने पूछा।

"मैं माँ के साथ ही तो सोता हूँ।"

बाप बिस्तर पर बैठ गया और चुपचाप मूंछों को बल देने लगा। कुछ देर बाद उसने कहा:

"मगर मैंने तो दादा के साथ तेरा बिस्तर लगाया है..."

“मैं दादा के साथ नहीं सोऊँगा!"

"मगर क्यों?"

"उनकी मूंछों से तम्बाकू की बू आती है!"

बाप ने फिर मूंछे मरोड़ी और गहरी साँस ली-

"नहीं बेटा, तू दादा के साथ ही जाकर सो जा..."

मीश्का ने रजाई से सिर ढंक लिया और चोरी-चोरी एक आँख से देखते हुए शिकायत के लहजे में कहा :

“कल भी तुम मेरी जगह सोये रहे और आज फिर वही चाहते हो... आज तुम सो जाओ दादा के साथ!"

मीश्का बिस्तर पर उठकर बैठ गया, बाप का सिर हाथों में ले लिया और धीरे से बोला :

"तुम ही सो जाओ दादा के साथ! माँ तो वैसे भी तुम्हारे साथ

नहीं सोयेगी। तुम्हारे मुँह से तो तम्बाकू की तेज़ बू आती है!"

“अच्छा, मैं ही सो जाऊँगा दादा के साथ, मगर फिर लड़ाई का किस्सा नहीं सुनाऊँगा।"

बाप उठा और रसोईघर की तरफ़ चल दिया।

"बापू!"

“क्या है?"

“अच्छा तो यहीं सो जाओ...” मीश्का ने गहरी साँस लेकर कहा और उठकर बैठ गया, “मगर लड़ाई के बारे में तो सुनाओगे ना?"

हाँ, सुनाऊँगा।"

दादा दीवार की ओर लेट गये और मीश्का को उन्होंने दूसरी ओर लिटा दिया। कुछ देर बाद बाप आया। उसने बिस्तर के क़रीब एक बेंच खींच ली और काग़ज़ में मोटा तम्बाकू लपेटकर कश लगाने लगा।

“हाँ तो हुआ यह... तुझे याद होगा कि हमारे खलिहान के पीछे कभी दुकानदार का एक खेत था?"

मीश्का को याद हो आया कि कैसे वह कभी सोंधे और ऊँचे-ऊँचे गेहूँ के खेत में भागा फिरा करता था। पत्थर की मुंडेर फाँदकर वह इस खेत में जा पहुँचता था। गेहूँ के पौधे उसके सिर से ऊँचे-ऊँचे होते थे और भरी हुई बालें मुँह पर गुदगुदी किया करती थीं। खेत से धूल-मिट्टी और स्तेपी की हवा की गन्ध भी आया करती थी। माँ उसे पुकार-पुकारकर कहा करती थी :

“मीन्युश्का, खेत में बहुत दूर मत जाना, तू रास्ता भूल जायेगा!'

बाप घड़ी भर को चुप हो गया और फिर मीश्का का सिर सहलाते हुए बोला :

“याद है तुझे कि तू मेरे साथ रेत के टीले तक गया था? वहाँ हमारा खेत था..."

मीश्का को फिर याद आया : रेत के टीले के पीछे, रास्ते के साथ-साथ, खेत की एक टेढ़ी और पतली-सी पट्टी थी तो सही। मीश्का अपने बाप के साथ वहाँ गया था और खेत को पशुओं के खुरों से रौंदा हुआ पाया था। भूमि पर जहाँ-तहाँ गेहूँ की बालों की गन्दी-गन्दी ढेरियाँ लगी हुई थीं। सिर्फ़ डंठल हवा में झूल रहे थे। मीश्का को इस बात का भी स्मरण हो आया कि उसके हट्टे-कट्टे और लम्बे-तड़गे बापू का चेहरा बहुत भयानक रुप से विकृत हो उठा था और धूल-मिट्टी से लथपथ उसके गालों पर रुक-रुककर आँसू की बूँदें टपकने लगी थीं। बाप को रोता देखकर मीश्का भी रो दिया था...

लौटते हुए बाप ने खेत के रखवाले से पूछा था :

“फेदोत, जानते हो कि मेरे खेत का किसने ऐसा बुरा हाल किया है?"

फेदोत ने ज़ोर से थूककर जवाब दिया था :

"दुकानदार मण्डी की ओर अपने ढोर-डंगर लिये जा रहा था। जान-बूझकर उसने उन्हें तुम्हारे खेत में छोड़ दिया था...”

बाप ने बेंच और नजदीक खींची और कहा :

“दुकानदार और बाकी अमीर लोगों ने सारी ज़मीन हथिया रखी थी, गरीबों के पास बोने के लिए ज़मीन ही नहीं थी। हमारे गाँव में ही नहीं, सभी जगह यही हाल था। बुरी तरह से नाक में दम कर रखा था तब उन्होंने हमारा... जीना दूभर था... मैंने सोचा ज़मीन नहीं है, न सही, दूसरों के पशु चराया करूँगा। कुछ अर्से बाद मुझे सेना में भर्ती कर लिया गया। सेना का भी यही हाल कि अफ़सर लोग ज़रा ज़रा-सी बात पर कसकर तमाचा लगाते... फिर बोल्शेविक सामने आ गये। इनमें जो सबसे बड़ा था, उसे लेनिन कहते थे। वह वैसे तो बड़ा सीधा-सादा आदमी था, मगर दिमाग़ बहुत बढ़िया पाया था उसने। जरूर हम देहातियों की नस्ल का ही होगा। बोल्शेविकों ने हमें ऐसी बातें बताईं कि हम तो दंग रह गये। कहा उन्होंने, 'अरे देहातियो, किसान-मज़दूरो, मुँह बाये क्या देख रहे हो? उठो मिलकर, सफाया कर दो इन श्रीमानों का, इन अफ़सरों का! सब कुछ तुम्हारा ही है!

“उनके इन शब्दों ने हमें चक्कर में डाल दिया। सोचा-विचारा तो महसूस हुआ कि ठीक ही कहते हैं। तो हम लोगों ने श्रीमानों से ज़मीन-जायदाद छीन ली। मगर इन लोगों ने बुरा वक्त भला कब देखा था, टूट पड़े हम पर, हम किसानों और मज़दूरों पर, और बस लड़ाई शुरु हो गई... समझे बेटा?

"हाँ, और बोल्शेविकों में सबसे बड़े यानी लेनिन ने जनता को

उठाकर खड़ा कर दिया। ठीक वैसे ही जैसे कि हल का फाल मिट्टी को उठाता चला जाता है। उन्होंने फ़ौजियों और मज़दूरों को एकजुट किया और अमीर लोगों की धज्जियाँ उड़ाने लगा। धज्जियाँ उड़ा दीं उनकी। फ़ौजी और मज़दूर लाल गार्ड कहलाने लगे। मैं भी उन्हीं में था। एक बड़े-से घर में रहते थे हम-स्मोल्नी नाम था उसका। दालान उसका-यह लम्बा सारा था और कमरे इतने थे कि आदमी रास्ता भूल जाये। ।

"एक बार क्या हुआ कि रात का वक्त था, मैं दरवाज़े पर पहरा दे रहा था। बाहर ठण्ड थी और मैं सिर्फ एक फ़ौजी कोट पहने था। हवा तन को काट रही थी.. तभी इस घर से दो आदमी बाहर निकले और आगे बढ़े तो मैंने देखा कि उनमें से एक लेनिन हैं। वह मेरे पास आये और प्यार से बोले :

"साथी, सर्दी तो नहीं लग रही?"

"और मैंने जवाब दिया, 'नहीं, साथी लेनिन! ठण्ड ही क्या, कोई दुश्मन भी नहीं डरा सकता हमें! हमने शासन की बागडोर इसलिये तो अपने हाथों में नहीं ली है कि फिर से उसे बुर्जुआ के हवाले कर दें!"

"लेनिन मुस्करा दिये और उन्होंने ज़ोर से मेरा हाथ दबाया। फिर वह धीरे-धीरे आगे बढ़े और फाटक की ओर चले गये।"

बाप ने जेब से तम्बाकू निकाला, काग़ज़ में लपेटा और सिगरेट बनाकर दियासलाई जलाई। उस रोशनी में मीश्का ने बाप की लाल और अकड़ी हुई मूंछों में चमकती हुई आँसू की बूँद देखी,

ओस की उस बूँद जैसी जो सुबह के वक्त बिच्छू बूटी की पत्ती के सिरे पर अटकी रह जाती है।

“हाँ तो ऐसे थे लेनिन! सभी की चिन्ता करते थे। एक-एक फ़ौजी रहता था उनके के बाद मैंने अक्सर उन्हें देखा। मेरे नजदीक से गजरते. दर से ही मुस्कराते और पूछते :

"तो क्या बुर्जुआ मिटा तो नहीं डालेंगे हमें?"

"इतना दम उनमें कहाँ, साथी लेनिन!' मैंने उन्हें यह जवाब दिया।

“सोलह आने सही निकली बेटा उनकी बात। ज़मीनें और कारखाने हमने अमीरों से, हमारा खून पीने वालों से, छीन लिये और उनकी कमर तोड़ डाली ! जब बड़ा हो जायेगा तो यह याद रखना कि तेरा बापू जहाजी था और चार बरस तक उसने कम्यून के लिए अपना खून बहाया था। तेरे बड़े होने तक मैं इस दुनिया में नहीं रहूँगा, लेनिन भी नहीं होंगे, पर हमारा काम सदियों तक जियेगा! बड़ा होने पर तू भी अपने बापू की तरह ही सोवियत सत्ता के लिये लड़ेगा, न?"

“लड़ूँगा!" मीश्का चिल्ला उठा। वह उछलकर बिस्तर पर खड़ा हो गया। उसने बाप की गर्दन से लिपटना चाहा। वह भूल गया कि क़रीब ही दादा सोये पड़े हैं, उनके पेट में पाँव लगा।

दादा चीख उठे। उन्होंने हाथ बढ़ाया कि मीश्का को बालों से पकड़ लें। मगर बाप ने जल्दी से मीश्का को हाथों पर उठा

लिया और दूसरे कमरे में ले गये।

मीश्का बाप के हाथों पर ही सो गया। शुरू में तो वह देर तक अद्भुत व्यक्ति लेनिन, बोल्शेविकों, लड़ाई और जहाजों के बारे में सोचता रहा। नींद आते समय घटिया तम्बाकू की गन्ध आती रही। बाद में पलकें भिंच गईं मानो किसी ने हथेलियों से सहला-सहलाकर उन्हें बन्द कर दिया हो।

मीश्का को अभी अच्छी तरह से नींद भी न आई थी कि उसने स्वप्न में एक शहर देखा। चौड़ी-चौड़ी सड़कें, राख में लोट-पोट होती हुई मुर्गियाँ। गाँव में उनकी काफ़ी संख्या होती है, मगर नगर में तो कोई हिसाब ही नहीं। मकान बिल्कुल वैसे थे जैसे कि बाप ने बताये थे। एक बड़ा-सा मकान, सरकण्डों से ढका हआ, उसकी चिमनी पर एक और मकान खड़ा हुआ, उसकी चिमनी पर तीसरा मकान रखा हुआ और सबसे ऊपर वाले मकान की चिमनी आकाश को छूती हुई।

मीश्का है कि चला जा रहा है इस शहर की सड़क पर। मुँह ऊपर को किये हुए इधर-उधर देखता जा रहा है। अचानक इतने में कहीं से एक लम्बा-तड़गा आदमी उसके सामने आकर खड़ा हो गया। वह लाल कमीज पहने था।

“अरे मीश्का तू सड़क पर बेमतलब मटरगश्ती करता क्यों फिर रहा है?" उसने बड़े प्यार से पूछा।

“दादा ने मुझे खेलने की छुट्टी दी है।"

"तू जानता है कि मैं कौन हूँ?"

"नहीं, मैं नहीं जानता..."

"मैं साथी लेनिन हूँ!"

मीश्का को डर ने ऐसा दबोचा कि उसके घुटने जवाब दे गये। उसका मन हुआ कि सिर पर पैर रखकर भाग ले, मगर लाल कमीज़ वाले व्यक्ति ने मीश्का की बाँह पकड़ ली और कहा :

"रे मीश्का, शर्म तो तुझमें रत्ती-भर नहीं है! तू खूब अच्छी तरह यह जानता है कि मैं ग़रीब लोगों के लिये लोहा ले रहा हूँ। तू क्यों मेरी फ़ौज में शामिल नहीं हुआ?"

“दादा मुझे इसकी इजाजत नहीं देते!" मीश्का ने अपनी सफाई पेश की।

“खैर देख ले, जैसी तेरी मर्जी," साथी लेनिन ने कहा, “मगर तेरे बिना मेरा काम सिरे चढ़ने का नहीं। तुझे मेरी फ़ौज में नाम लिखाना ही चाहिये और बस!"

मीश्का ने लेनिन का हाथ पकड़ लिया और बहुत दृढ़तापूर्वक कहा :

“अच्छा तो यों ही सही। मैं दादा से पूछे बिना ही तुम्हारी फ़ौज में शामिल हो जाता है और गरीब लोगों के लिए लड़ेंगा। ऐसा करने के लिये अगर दादा मझे डॉटे-डपटेंगे तो उनसे तुम निपट लेना!"

मैं जरूर तुम्हारी हिमायत करुँगा!" साथी लेनिन ने कहा और

सड़क पर आगे बढ़ गये। मीश्का का तो खुशी के मारे यह हाल था कि साँस लेना मुश्किल ! दिल बल्लियों उछल रहा था। उसका मन हो रहा था कि चीखकर कुछ कहे, मगर जबान सूखकर रह गई...

मीश्का बिस्तर पर उछल पड़ा, दादा को लात लगी और मीश्का की आँख खुल गई।

दादा नींद में बड़बड़ाये, होंठों से चप-चप की आवाज़ करने लगे। खिड़की से रोशनी झाँकने लगी थी। तालाब के परे, हल्के पीले आकाश में रक्तवर्णी फेन से मिलते-जुलते बादल पूर्व की ओर से उमड़े चले आ रहे थे।

***

अब तो बाप हर शाम मीश्का को लड़ाई और लेनिन के किस्से सुनाने और यह बताने लगा कि वह किस-किस जगह लड़ने गया।

शनिवार का दिन था। शाम को कार्यकारिणी समिति का चौकीदार एक नाटे-से व्यक्ति को साथ लिये हुए आया। यह व्यक्ति फ़ौजी कोट पहने था और बगल में चमड़े की पोटली दबाये था। चौकीदार ने दादा को आवाज़ दी और कहा :

“देखिये, मैं आपके घर पर सोवियत के एक कर्मचारी को लेकर आया हूँ। यह नगर से आया है और रात को आप ही के यहाँ टिकेगा। रात की रोटी का प्रबन्ध कर दीजियेगा।"

“वह तो खैर सब हो जाएगा,” दादा ने कहा, “मगर श्रीमान साथी, आप आर्डर तो लाये हैं न?"

दादा की योग्यता देखकर मीश्का तो दंग ही रह गया। वह मुँह में उँगली डालकर बहुत ध्यान से बातें सुनने लगा।

"आर्डर-वार्डर सब कुछ है!" चमड़े की पोटली वाला व्यक्ति हँस दिया और अन्दर की कोठे की तरफ़ चल दिया।

दादा उस अजनबी के पीछे-पीछे हो लिये और मीश्का दादा के पीछे-पीछे।

"किसी काम से आप हमारे गाँव में आये हैं?" दादा ने रास्ते में पूछा।

"मैं यहाँ चुनाव कराने आया हूँ। सोवियत के सदस्यों और अध्यक्ष का चुनाव होगा।"

कुछ ही देर बाद बाप भी खलिहान से आ गया। उसने अजनबी से दुआ-सलाम की और माँ से खाने का प्रबन्ध करने को कहा। खाने के बाद अजनबी और मीश्का का बाप बेंच पर साथ-साथ बैठ गये। अजनबी ने अपनी चमड़े की पोटली खोली, उसमें से काग़ज़ों का एक पुलिन्दा निकाला और बाप को दिखाने लगा। मीश्का के मन में बड़ी जिज्ञासा थी और वह इनके आस-पास घूम रहा था कि किसी तरह उन काग़ज़ों पर एक नज़र डाल ले। बाप ने एक काग़ज़ लिया और मीश्का को दिखाते हुए कहा :

"देख मीश्का, यह हैं लेनिन!"

मीश्का ने बाप के हाथ से तस्वीर झपट ली, उसी पर नज़र गड़ा दी और उसका मुँह आश्चर्य से खुल गया। यह लेनिन का एक छविचित्र था। कद बहुत बड़ा नहीं, वह लाल कमीज भी नहीं, कोट पहने थे। एक हाथ पतलून की जेब में था और दूसरा सामने की ओर उठा हुआ। मीश्का इस चित्र पर नज़र टिकाये था। एक ही नज़र में वह उसे ऊपर से नीचे तक देख गया। उसके स्मृतिपट पर हमेशा के लिये, बहुत ही अमिट रूप में लेनिन का एक-एक नक्श. अंकित होकर रह गया। कुछ-कुछ मुड़ी हुई भौंहें और आँखों और होंठों के कोनों में दुबकी हुई मुस्कान की स्मृति उसके मन में सदा के लिए जमकर रह गई।

अजनबी ने मीश्का के हाथ से चित्र लिया, अपनी पोटली में रखकर ताला लगाया और सोने की तैयारी करने लगा। उसने कपड़े उतारे और फ़ौजी कोट ओढ़कर लेट गया। उसकी आँख लगने ही वाली थी कि दरवाज़ा चरचराया। उसने सिर ऊपर उठाया:

“कौन है?" फर्श पर किसी के नंगे पैरों की आहट हुई।

"कौन है?" उसने दोबारा पूछा और बिस्तर के निकट बिल्कुल अप्रत्याशित ही मीश्का को खड़े पाया।

"क्या बात है बेटे?"

मीश्का घड़ी-भर चुपचाप खड़ा रहां, फिर उसने साहस बटोरा और फुसफुसाकर कहा:

"चाचा, देखो बात यह है.... तुम मुझे... मुझे लेनिन दे दो!.."

अजनबी चुप रहा, बिस्तर से आगे की ओर गर्दन बढ़ाकर उसने लड़के को गौर से देखा।

मीश्का को डर ने आ दबाया-हो सकता है कि चाचा कंजूसी कर जाये और चित्र न दे! आवाज़ काँप न जाये इसका प्रयास करते और रुंधते हुए गले से उसने जल्दी-जल्दी फुसफुसाकर कहा :

“आप मुझे दे दें, बिल्कुल दे दें यह तस्वीर... मेरे पास टीन का अच्छा-सा डिब्बा है, मैं वह दे दूंगा आप को और इसके अलावा पाँसे भी दे दूँगा और..." मीश्का ने तंग आकर हाथ झटका और कहा, "वे जूते भी दे दूंगा जो बापू मेरे लिये लाये हैं!"

“मगर तू करेगा क्या लेनिन का?" अजनबी ने मुस्कराते हुए पूछा।

“नहीं देने का!" मीश्का ने मन ही मन सोचा। उसने मुँह दूसरी तरफ़ फेर लिया ताकि आँसू की बूँद नज़र न आये और टूटती-सी आवाज़ में कहा :

“चाहिये, बस!"

अजनबी हँस दिया। उसने सिरहाने के नीचे से पोटली निकाली और मीश्का को तस्वीर दे दी। मीश्का ने तस्वीर ली, उसे कमीज के नीचे, दिल के बिल्कुल निकट, सीने पर ज़ोर से भींचा और कोठे से भागता हुए बाहर आया। दादा की आँख खुल गई और उन्होंने पूछा :

“अरे तू कहाँ टापता फिर रहा है आधी रात को? कहा था तुझसे कि रात को दूध मत पी-अब बार-बार उठ-उठकर भागेगा! अरे सुन! अब गन्दे पानी की यह जो बाल्टी पड़ी है, उसी में अपना काम कर ले। बाहर अहाते में ले जाऊँ तुझे, यह मेरे बस की बात नहीं!"

मीश्का चुपचाप लेट गया, तस्वीर को दोनों हाथों से भींचे रहा। वह करवट लेते हुए डरता कि कहीं तस्वीर मुड़मुड़ा न जाये। इसी तरह उसकी आँख लग गई।

मुँह अँधेरे ही मीश्का की आँख खुल गई। माँ ने गाय दुहकर उसे रेवड़ के साथ बस भेजा ही था। मीश्का को देखा तो दोनों हाथों से सिर थाम लिया :

“अरे तुझे किसने काट खाया है! इतने सबेरे ही क्यों उठकर बैठ गया है?"

मीश्का ने फोटो को कमीज के नीचे दबाया और माँ के क़रीब से झटपट खलिहान की तरफ़ बढ़ गया और खत्ती में गायब हो गया।

खत्ती के चारों ओर बरडॉक की झाड़ियाँ खड़ी थीं और बिच्छू बूटी की हरी दुर्गम दीवार काँटे फैलाये हुए थी। मीश्का कूद-फाँदकर खत्ती में जा पहुंचा। उसने धूल और मुर्गियों की बीट हाथों से हटाई, बरडॉक का एक बड़ा-सा और सूखकर पीला पड़ा हुआ पत्ता तोड़ा, फोटो को उसमें लपेटा और ज़मीन पर रखकर उसपर एक कंकड़ रख दिया ताकि वह हवा से उड़ न

जाये।

सुबह से शाम तक पानी बरसता रहा। आकाश में सुरमई चंदवा छाया हुआ था। अहाते के गढ़ों में बूंदों की टपटप हो रही थी और सड़कों पर छोटे-छोटे नद-नाले बह रहे थे।

मीश्का को मजबूरन दिन-भर घर में बैठे रहना पड़ा। झुटपुटा हो चला था जब बाप और दादा सभा में भाग लेने के लिये कार्यकारिणी समिति के दफ्तर की ओर चले। मीश्का ने दादा की ओरीदार टोपी पहनी और उनके पीछे-पीछे हो लिया। कार्यकारिणी का दफ्तर गिरजाघर के चौकीदार के झोंपड़े में था। बड़ी मुश्किल से टेढ़ी-मेढ़ी और गन्दी-गन्दी सीढ़ियाँ चढ़कर मीश्का बरसाती में पहुँचा और वहाँ से कमरे में गया। कमरा खचाखच भरा था और तम्बाकू का धुआँ छत को छू रहा था। खिड़की के पास मेज़ लगाये वही अजनबी बैठा था। वह कमरे में जमा होते हुए क़ज्ज़ाकों से कुछ कह रहा था।

मीश्का चुपचाप सबसे पीछेवाली बेंच पर जा बैठा।

“साथियो! आपमें से कौन इस बात के हक में हैं कि फोमा कोशुनोव को अध्यक्ष चुना जाये! कृपया अपने हाथ उठायें!"

मीश्का के आगे दुकानदार का दामाद प्रोखोर लिसेन्कोव बैठा था। वह चिल्लाया :

“भाइयो!.. मेरी प्रार्थना है कि इस व्यक्ति को उम्मीदवार न बनाया जाये। वह हाथ का सच्चा आदमी नहीं है। वह जब हमारे

रेवड़ चराया करता था तभी यह बात साफ़ हो गई थी..."

मीश्का ने मोची फेदोत को खिड़की के दासे से उठते देखा। वह दोनों हाथ मिलाकर चिल्लाने लगा :

“साथियो, खाते-पीते लोग यह सहन नहीं कर सकते कि चरवाहा फोमा सोवियत का अध्यक्ष चुना जाये। मगर चूँकि वह प्रोलेतारी और सोवियत सत्ता का हिमायती है इसलिये...."

मोची फेदोत अपनी बात पूरी भी न कर पाया कि दरवाज़े के पास सटकर खड़े हुए मालदार क़ज्जाक ज़ोर-ज़ोर से पाँव पटकने और सीटियाँ बजाने लगे। कार्यकारिणी के दफ्तर में गुलगपाड़ा मच गया।

"चरवाहा नहीं चाहते!"

"नौकरी से लौट आया-लोगों के ढोर चराया करे!"

'भाड़ में जाये फोमा कोर्शनोव!"

मीश्का ने बेंच के पास खड़े बाप के चेहरे पर नज़र डाली, उसपर हवाइयाँ उड़ रही थीं। बाप का ऐसा हाल देखकर खुद मीश्का के चेहरे का रंग उड़ गया।

"खामोश रहो साथियो! सभा से निकाल दूंगा! मेज़ पर ज़ोर से मुक्का मारकर अजनबी चिल्लाया।

"क़ज्जाकों में से अपना आदमी चुनेंगे!"

“नहीं चाहिये!"

"नहीं चा-हि-ये..." क़ज्जाक शोर मचा रहे थे और सबसे ज़्यादा गला फाड़कर चीख रहा था दुकानदार का दामाद प्रोखोर।

एक हट्टा-कट्टा और लाल दाढ़ीवाला क़ज्जाक उछलकर बेंच पर खड़ा हो गया। उसके कान में बाली थी और फटे हुए कोट पर जहाँ-तहाँ पैबन्द लगे थे।

"भाइयो!.. मामला चौपट हुआ जा रहा है!.. होहल्ला करके ये अमीर लोग अपने आदमी को अध्यक्ष बना देना चाहते हैं!.. फिर से वही..."

वहाँ इतना शोर मच रहा था कि कानों के पर्दे फटे जा रहे थे। बालीवाला क़ज्ज़ाक चीख-चीखकर जो कुछ कह रहा था उसका कोई-कोई शब्द ही मीश्का को सुनाई दिया :

"ज़मीन... फिर बँटवाई जायेगी... बंजर हमें... बढ़िया ज़मीन वे खुद दबा लेंगे..."

"प्रोखोर को अध्यक्ष बनाया जाये!" दरवाज़े के निकट लगातार यही स्वर गूंज रहा था।

"प्रोखोर! हो-हो-हो! हा-हा-हा!"

जैसे-तैसे शोर कम हुआ। अजनबी भौंहें चढ़ाकर और लाल-पीला होता हुआ देर तक कुछ चीखता-चिल्लाता रहा।

"डाँट-डपट रहा होगा!" मीश्का ने सोचा।

अजनबी ने ऊँची आवाज़ में पूछा : "फोमा कोर्शुनोव के हक में कौन-कौन हैं?"

बेचों के ऊपर बहुत-से हाथ उठ गये। मीश्का ने भी हाथ ऊँचा कर दिया। कोई आदमी एक के बाद दूसरी बेंच पर कूदता हुआ ऊँचे-ऊँचे गिनती करने लगा :

"तिरसठ... चौसठ," मीश्का की ओर न देखते और उसके उठे हाथ की ओर उँगली से इशारा करते हुए उसने कहा : “पैंसठ!"

अजनबी ने काग़ज़ पर कुछ लिखा और फिर ऊँची आवाज़ में कहा : “जो प्रोखोर लिसेन्कोव के हक में हैं, हाथ उठायें!"

सत्ताईस धनी कज्जाकों और चक्की के मालिक येगोर ने झटपट हाथ ऊँचे कर दिये। मीश्का ने इर्द-गिर्द नज़र दौड़ाई और उसने भी हाथ ऊँचा कर दिया। गिनती करने वाला व्यक्ति मीश्का के बराबर आया और ऊपर से उसे देखकर उसने ज़ोर से मीश्का का कान पकड़ लिया। मीश्का को बड़ा दर्द हुआ।

“अरे पाजी कहीं के! चल भाग यहाँ से वरना मरम्मत कर डालूँगा! चला है राय देने!"

इर्द-गिर्द बैठे लोग हँस दिये। गिनती करने वाला व्यक्ति मीश्का को दरवाज़े तक लाया और पीठ पर ठोंक दिया। मीश्का को याद हो आया कि दादा और बाप के बीच तकरार हो जाने पर बाप ने क्या कहा था। गन्दी-गन्दी और फिसलनी सीढ़ियों से नीचे जाते हुए मीश्का ने भी वही शब्द दोहरा दिये :

“तुम्हें ऐसा करने का हक नहीं है!"

"ठहर, बड़ा आया है मुझे हक समझाने वाला!"

मीश्का को अपमान का कड़वा घूँट पीना पड़ा, बहुत खीझ आई।

मीश्का ने घर लौटकर आँसू बहाये और फिर माँ से फरियाद की। माँ ने डाँट पिलाई :

"तू हर जगह घुसता क्यों फिरता रहता है! सभी जगह अपनी नाक घुसेड़ा करता है!... तेरे कारण तो नाक में दम है मेरा!"

अगले दिन सुबह सब नाश्ता करने बैठे। नाश्ता अभी खत्म भी नहीं हुआ था कि बहुत दूर से बाजे की ढम-ढम सुनाई दी। बाप ने चमचा मेज पर रखा और मूंछे पोंछते हुए कहा :

“यह तो फ़ौजी बैण्ड लगता है!"

मीश्का तो हवा की तरह बेंच से गायब हो गया। ड्योढ़ी का दरवाज़ा बन्द हुआ। खिड़की से तेज़ कदमों की चप-चप सुनाई देती रही...

दादा और बाप बाहर अहाते में आ गये। माँ खिड़की से धड़ बाहर निकालकर देखने लगी।

सड़क के सिरे पर हरी लहरों-सी लहराती हुई लाल सेना की कतारें चली जा रही थीं। आगे-आगे कुछ बैण्डवाले बिगुल बजाते चले आ रहे थे और ढोलची ज़ोरों से ढोल को ढमढमा रहा था। पूरे गाँव में बैण्ड की आवाज़ गूंज रही थी।

मीश्का की आँखें सभी ओर दौड़ रही थीं। शुरू में तो वह खोया-खोया-सा एक ही जगह पर चक्कर काटता रहा और फिर

झपटकर बैण्डवालों के पास जा पहुँचा। उसके हृदय में कोई मीठी-मीठी चीज़ हिलोरें ले रही थी, वह मुँह तक आने को बेकरार थी... मीश्का धूल-मिट्टी से सने हुए लाल सेना के फ़ौजियों के प्रफुल्लित चेहरों को और गाल फुला फुलाकर बाजों में से आवाज़ निकालते हुए बैण्डवालों को देखता रहा। फिर उसने अचानक और एकबारगी यह तय कर लिया : “मैं भी जाऊँगा इनके साथ लड़ाई लड़ने!"

उसे अपना सपना याद हो आया। न जाने कहाँ से उसमें हिम्मत आ गई कि किनारेवाले फ़ौजी का थैला थामकर उसने पूछा :

“आप कहाँ जा रहे हैं? लड़ाई लड़ने?"

"तो और क्या? लड़ने ही तो जा रहे हैं!"

"किस की ओर से आप लड़ेंगे?"

"सोवियत सत्ता की ओर से, पगले! अच्छा इधर आ, बीच में।"

उसने मीश्का को फ़ौजियों की कतारों के बीच खींच लिया, किसी ने हँसते-हँसते उसके गुद्दी पर चुटकी काट ली, किसी अन्य ने जेब में पड़ा हुआ गन्दा-सा चीनी का छोटा-सा टुकड़ा निकाला और उसके मुँह में लूंस दिया। चौक में पहुँचने पर पहली कतार में से किसी ने चीखकर कहा :

“रुक जाओ!"

लाल सेना के फ़ौजी रुके, चौक में इधर-उधर बिखरे और स्कूल की बाड़ की छाया में ठण्डी जगह देख सटकर लेट गये। घुटे हुए

सिरवाला लाल सेना का एक लम्बा-तड़ंगा फ़ौजी मीश्का के पास आया। उसकी बगल में तलवार लटक रही थीं। मुस्कराते हुए उसने पूछा :

“अरे तू कहाँ से आ गया इधर?"

मीश्का ने अपने चेहरे पर बड़प्पन का भाव लाकर नीचे सरकते पतलून को खींचकर ऊपर किया।

"मैं आप लोगों के साथ लड़ाई लड़ने चलूँगा!"

“साथी बटालियन कमाण्डर, इसे भी सहायकों में शामिल कर लो!" एक सैनिक ने ऊँची आवाज़ में कहा।

सभी ओर ज़ोर से कहकहे गूंज गये। मीश्का बार-बार पलकें झपकाता खड़ा रहा। मगर “बटालियन कमाण्डर" के अजीब-से नामवाले व्यक्ति ने भौंहें चढ़ाईं और ज़ोर से डाँटते हुए कहा :

"हँसने की क्या बात है मूर्खो? स्पष्ट है कि हम इसे अपने साथ ले चलेंगे... मगर । एक शर्त पर," बटालियन कमाण्डर मीश्का की ओर घूमा और बोला, “देख तेरे पतलून में सिर्फ एक पट्टी है। ऐसे काम नहीं चलेगा। ऐसे तो तू अपने हुलिये से हमारी हेठी करायेगा... यह देख, मेरे पतलून के दो पट्टियाँ हैं, सभी के पतलूनों के दो हैं। जा भागकर जा, माँ से दूसरी पट्टी सिलवा ला। हम तेरा यहीं इन्तजार करेंगे..." इतना कहकर कमाण्डर बाड़ की तरफ़ घूमा और आँख मारते हुए उसने ऊँची आवाज़ में कहा, "तेरेश्चेन्को, जा, लाल सेना के नये फ़ौजी के लिये जल्दी

से बन्दूक और फ़ौजी कोट लेकर आ!"

बाड़ की छाया में लेटे हुए फ़ौजियों में से एक उठा, टोप के छज्जे तक हाथ उठाकर उसने सलामी दी और कहा :

“अच्छा अब तू उड़कर जा! माँ से झटपट पट्टी सिलवाकर लौट आ!"

मीश्का ने कड़ी नज़र से बटालियन कमाण्डर की तरफ़ देखा :

"देखो, मुझे धोखा नहीं देना!"

"क्या बात करता है! कभी हो सकता है?.."

चौक से घर तक काफ़ी फासला था। मीश्का फाटक तक ही दौड़ा था कि दम फूल गया। साँस लेना कठिन हो गया। फाटक के पास पहुँचने पर उसने दौड़ते-दौड़ते ही पतलून उतार लिया। नंगे पाँव जल्दी से दौड़ता हुआ तेज़ झोंके की तरह मकान में जा घुसा :

"माँ... पतलून की... एक और पट्टी सी दो!"

घर में खामोशी थी। तन्दूर के ऊपर मक्खियाँ भिनभिना रही थीं। मीश्का भागता हुआ अहाते में पहुँचा, खलिहान और बगीने में गया-न बाप, न माँ, न दादा। छलाँगें मारता कोठे में गया-एक बोरी पर नज़र जा पड़ी। उसने चाकू लिया और उसकी लम्बी डोरी काट ली। सीने की फुरसत मीश्का को कहाँ थी और फिर सीना आता भी तो नहीं था। उसने झटपट उसे पतलून में बाँध लिया और कन्धे पर से ले जाकर सामने की तरफ़ गाँठ दे दी।

वह भागकर खत्ती में गया।

उसने कंकड़ हटाकर लेनिन का चित्र उठाया। अपनी ओर इशारा करते लेनिन के उठे हुए हाथ को उड़ती नज़र से देखा और साँस रोककर धीरे से फुसफुसाया :

"देख लिया न?.. मैं भी जा रहा हूँ तुम्हारी फ़ौज में!"

बड़ी सावधानी से उसने लेनिन की तस्वीर बरडॉक के पत्ते में लपेटी, उसे कमीज के नीचे दबा लिया और उछलता-कूदता सड़क पर आ गया। वह एक हाथ से चित्र को छाती से चिपकाये रहा और दूसरे से पतलून सम्भालता गया। जब दौड़ता हुआ पड़ोसिन की बाड़ के निकट से गुजरा तो पुकारकर कहा :

“अनीसिमोना!"

“क्या है?"

"हमारे घरवालों से कह देना कि खाने पर मेरा इन्तज़ार न करें!"

"तू कहाँ उड़ा जा रहा है, पाजी?"

मीश्का ने हाथ हिलाकर जवाब दिया :

"फ़ौजी नौकरी पर जा रहा हूँ!"

वह भागता हुआ चौक में पहुँचा तो उसे जैसे काठ मार गया। चौक में तो आदमी का नामो-निशान तक नहीं था। बाड़ के क़रीब सिगरेटों के टुकड़े, खाली डिब्बे और किसी की फटी-पुरानी पट्टियाँ पड़ी थीं। गाँव के बिल्कुल दूसरे सिरे से बैण्ड की

आवाज़ और ठोस मिट्टी की कच्ची सड़क पर चलने वालों के पैरों की धम-धम सुनाई दे रही थी।

मीश्का का गला आँसुओं से रुंध गया। वह चीख उठा और अपनी बची-बचाई पूरी ताकत समेटकर भाग खड़ा हुआ। जा मिलता, जरूर वह उनसे जा मिलता, मगर चमार के अहाते के सामने पीले रंग का दुमदार कुत्ता फैलकर लेटा हुआ था। उसने गुर्राकर दाँत दिखाये। मीश्का जब भागकर दूसरी सड़क पर पहुंचा तो बाजों की आवाज़ खो चुकी थी और पैरों की धम-धम भी।।

***

दो दिन बाद गाँव में कोई चालीस फौजियों की एक टुकड़ी आई। ये लोग घुटनों तक के भूरे फेल्ट के बूट और मजदूरों के तेल लगे हुए कोट पहने थे। बाप कार्यकारिणी समिति से दोपहर का खाना खाने घर आया तो दादा से बोला :

“बापू, खत्ती में अनाज तैयार कर लो। अनाज-दस्ता आया है। अनाज देना होगा।"

फ़ौजी एक-एक घर में जाते थे, कोठारों-खत्तियों में संगीनें भोंक-भोंककर जाँच करते थे और छिपाया हुआ अनाज निकलवाकर एक सामाजिक भण्डार में जमा करते जाते थे।

वे ग्राम-सोवियत के अध्यक्ष के घर भी आये। उनमें जो सबसे आगे-आगे था, मुँह में पाइप लगाये था। उसने दादा से पूछा :

"बड़े मियाँ, अनाज छिपा रखा है क्या? सच-सच बता दो!"

दादा ने दाढ़ी पर हाथ फेरा और बड़े गर्व से कहा : "अजी क्या कहते हैं, मेरा बेटा तो खुद कम्युनिस्ट है!" सब खत्ती में पहुँचे। पाइपवाले फ़ौजी ने एक नज़र में सारे अनाज को आँका और मुस्करा दिया।

“बड़े मियाँ, इसमें से इतना हमारे भण्डार में पहुँचा दो, बाकी अपने परिवार की रोटी और बीज के लिये रख लो। जिनकी खत्तियाँ और कोठार फालतू अनाज से भरे पड़े हैं, हम तो उनसे अनाज निकलवाते हैं ताकि भूखे मज़दूरों और किसानों का पेट भर सके। मैं समझता हूँ कि आप तो खुद ही हमें थोड़ा-सा अनाज दे देंगे।"

दादा ने बूढ़े घोड़े को छकड़े में जोता, कुढ़ते-बड़बड़ाते रहे और आठ बोरियाँ छकड़े में लाद दीं। अफसोस से उन्होंने हाथ झटका और सामाजिक भण्डार की ओर छकड़ा बढ़ा दिया। माँ को अनाज के इस तरह निकल जाने का दुख हुआ, वह कुछ रोई-धोई। मगर मीश्का ने अनाज की बोरियों की लदाई में दादा का हाथ बँटाया और फिर पादरी के बेटे वीत्का के साथ खेलने के लिए उसके घर चला गया।

मीश्का और वीत्का अभी रसोईघर में जाकर बैठे ही थे, उन्होंने काग़ज़ के घोड़े काट-काटकर फर्श पर बिछाये ही थे कि वे ही फ़ौजी पादरी के रसोईघर में आ पहुँचे। पादरी साहब दौड़-धूप करने लगे। उनकी आवभगत को दौड़े आये, आदरभाव जताने

लगे। उन्होंने फ़ौजियों से आराम-कमरे में जाने को कहा। मगर पाइपवाले फ़ौजी ने कड़ाई-रुखाई से कहा :

"खत्ती में चलिये। कहाँ जमाकर रखा है आपने अनाज?"

भीतरवाले कमरे से पादरी की बीवी लपककर वहाँ आई। उसके बाल अस्त-व्यस्त हुए पड़े थे। अपने होंठों पर चोर की सी हँसी लाकर उसने कहा :

“विश्वास कीजिये जनाब, हमारे घर में तो अनाज का एक दाना भी नहीं है! मेरे पति ने अपने श्रद्धालुओं के घरों में अभी फेरा नहीं किया..."

"तहखाना है आपके यहाँ?”

“नहीं, हमारे यहाँ तहखाना नहीं है.. हम तो खत्ती में ही पहले अनाज जमा करते थे..."

मीश्का को याद हो आया कि कैसे वह वीत्का के साथ रसोईघर से एक बड़े-से तहखाने में जाया करता था। पादरी की बीवी की तरफ़ मुँह करके उसने कहा:

"रसोईघर से मैं और वीत्का तो तहखाने में उतरा करते थे, आप भूल गईं क्या?" पादरी की बीवी के चेहरे का रंग फक हो गया, मगर वह हँस दी :

"तू भूल रहा है छोकरे! वीत्का, तुम लोग बाहर बगीचे में जाकर खेलो!"

पाइपवाले फ़ौजी ने आँखें झपकाईं और मीश्का की ओर देखकर

मुस्कराया :

"लड़के, किधर को रास्ता है उस तहख़ाने का?"

पादरी की बीवी बेचैनी से उँगलियाँ चटकाती हुई बोली :

"खूब हैं आप भी, इस बेवकूफ छोकरे की बात पर विश्वास कर रहे हैं! मैं आपको यकीन दिलाती हूँ कि हमारे घर में तहख़ाना नहीं है!"

पादरी ने अपने चोगे के छोर झटकते हुए कहा : हु“आइये, कुछ जलपान कीजिये! चलिये कमरे में!"

पादरी की बीवी ने मीश्का के पास से गुजरते हुए उसके हाथ पर ज़ोर की चुटकी काटी और मुस्कराकर बड़े प्यार से कहा :

“जाओ बच्चो, बगीचे में जाओ! यहाँ गड़बड़ी नहीं करो!"

फौजियों ने आँखों ही आँखों में इशारे किये और रसोईघर में इधर-उधर चक्कर काटते हुए बन्दूकों के दस्तों से फर्श को ठोक-बजाकर देखने लगे। दीवार के पास से उन्होंने मेज़ खिसकाई और टाट उठाया। पाइपवाले फ़ौजी ने फर्श का एक तख्ता उलटा, तहखाने में झाँका और सिर हिलाते हुए कहा :

"शर्म नहीं आती आप लोगों को? कह रहे थे कि अनाज का एक दाना भी नहीं है और तहखाने में ऊपर तक गेहूँ भरा पड़ा है!"

पादरी की बीवी ने मीश्का को ऐसी काटती नज़र से देखा कि उसका कलेजा काँप उठा। उसका मन हुआ कि झटपट भाग ले घर को। वह उठा और आँगन में आया। पादरी की बीवी भी

लपकती हुई उसके पीछे-पीछे ड्योढ़ी में पहुंची और उस पर झपटी। मीश्का को बालों से पकड़कर वह फर्श पर घसीटने लगी।

मीश्का ने बड़ी मुश्किल से अपने बाल छुड़वाये और जान छोड़कर घर की तरफ़ भागा। आँसू थे कि झड़ी बनकर बरस रहे थे। माँ को उसने रो-रोकर सारा हाल सुनाया और वह तो बस सिर थामकर रह गई :

"हाय रे, क्या करूँ मैं तेरा?... दूर हो जा मेरी आँखों के सामने से, वरना मार-मारकर चटनी बना दूंगी!..."

इस दिन के बाद तो यह नियम बन गया कि जब कोई मीश्का का अपमान करता, वह खत्ती में जा घुसता। पत्थर हटाता, बरडॉक के पत्ते से चित्र निकालता, आँसुओं से चित्र को भिगोता और लेनिन को अपना दुख-दर्द सुनाता, अपमान करने वाले के खिलाफ़ शिकवा-शिकायत करता।

इसी तरह एक सप्ताह बीत गया। मीश्का को ऊब अनुभव होने लगी। साथ खेलने वाला कोई नहीं था। अड़ोस-पड़ोस के बच्चे कन्नी काटते। “हरामी" के साथ अब बड़ों से सुनी-सुनायी एक उपाधि और जोड़ दी गई थी। लड़के पीछे से आवाजें कसते :

“अरे ओ कम्युनिस्ट! ओ सड़े अण्डे, इधर देख!"

एक दिन क्या हुआ कि मीश्का साँझ गहराने के पहले तालाब से घर लौटा। वह अभी घर के भीतर नहीं पहुंचा था कि बाप को

तीखी आवाज़ में कुछ कहते सुना। माँ गिड़गिड़ाती हुई उसी तरह विलाप कर रही थी जैसे कि किसी के मर जाने पर किया जाता है। मीश्का ने दरवाज़े में दाखिल होते ही देखा कि बाप अपना फ़ौजी कोट तह कर रहा है और बड़े बूट कस रहा है।

“बापू, तुम कहाँ चले?"

बाप हँस दिया। उसने कहा :

"बेटा, तू अपनी माँ को समझा-बुझा... इसके रोने-धोने से मेरा कलेजा फटा जा रहा है। मैं लड़ाई पर जा रहा हूँ और यह मुझसे चिपकी जा रही है!"

"मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा, बापू!”

पिता ने पेटी कसी और फीतों वाली टोपी पहनी।

"दोनों को नहीं जाना चाहिये घर से! मैं लौट आऊँगा तब तुम जाना, वरना जब फसल पकेगी तो कौन काटेगा? माँ तुम्हारी घर के काम-काज में उलझी रहती है और दादा हो गये बूढ़े...”

पिता से विदा होते समय मीश्का ने अपने आँसू अन्दर ही अन्दर पी लिये। इतना ही नहीं, मुस्करा तक दिया। माँ, पहले की भाँति, बाप की गर्दन से लिपट गई। बाप ने जबर्दस्ती उससे अपने को आज़ाद किया। दादा ने केवल आह भरी। लड़ाई पर जानेवाले को चूमते हुए उन्होंने उसके कान में फुसफुसाकर कहा :

“फोमा... मेरे प्यारे बेटे!.. अच्छा हो कि तुम न जाओ! तुम्हारे

बिना, शायद तुम्हारे बिना भी काम चल जाये! अगर तुम मारे गये तो हम कहीं के न रहेंगे!..."

"हटाओ बापू... यह बात ठीक नहीं है। अगर सभी बीवियों की गोद में छिपकर बैठे रहेंगे तो हमारी सत्ता की रक्षा कौन करेगा?"

"अगर ऐसा ही ठीक समझते हो तो जाओ।"

दादा ने मुँह दूसरी ओर किया और चुपके-से आँसू पोंछ डाले। घर के लोग बाप को कार्यकारिणी के दफ़्तर तक पहुँचाने गये। वहाँ आँगन में कोई बीस आदमी जमा थे, बन्दूकें लिये हुए। मीश्का के बाप ने भी बन्दूक ली और आखिरी बार मीश्का को चूमाँ फिर बाकी लोगों के साथ सड़क पर कदम बढ़ाता हुआ वह भी गाँव के बाहर की ओर चला गया।

मीश्का दादा के साथ घर लौटा। उसकी माँ मुश्किल से अपने को सम्भालती और लड़खड़ाती हुई पीछे-पीछे चली आ रही थी। गाँव में कहीं-कहीं कुत्ते भौंक रहे थे, कहीं-कहीं रोशनी नज़र आ रही थी। गाँव पर रात का अँधेरा इस तरह छाया जा रहा था मानो किसी बढिया ने काली ओढनी ओढ ली हो। बँदा-बाँदी हो रही थी. गाँव से कुछ दूर स्तेपी में बिजली कौंध-कौंध उठती थी और रह-रहकर बादलों की गरज सुनाई पड़ती थी।

वे घर के निकट पहुँच गये। मीश्का रास्ते-भर चुप रहा, मगर अब उसने पूछा :

"दादा, बापू किससे लड़ने गये हैं?"

“अरे, छोड़ भी मेरा पिण्ड!"

"दादा!"

“क्या है?"

"किससे लड़ेंगे मेरे बापू?"

दादा ने फाटक की चटखनी लगाते हुए जवाब दिया :

"हमारे गाँव के पास कुछ दुष्ट लोगों ने मुसीबत कर रखी है। लोग उसे 'गिरोह' बताते हैं, मगर मैं तो यही समझता हूँ कि कोई डाकू-लुटेरे होंगे... तुम्हारा बाप उन्हीं से लड़ने गया है।"

"बहुत हैं क्या वे लोग दादा?"

“सुना है कि कोई दो सौ हैं... अच्छा अब जाकर सो जा। तुझे क्या लेना-देना है इन बातों से!"

रात को आवाज़ों के शोर से मीश्का की आँख खुल गई। उसने अपना बिस्तर टटोला तो दादा को गायब पाया।

"दादा, कहाँ हो तुम?"

“चुपचाप पड़ा रह और सो जा!"

मीश्का उठा और अँधेरे में रास्ता टटोलता हुआ खिड़की तक जा पहुँचा। दादा सिर्फ अण्डरवियर पहने हुए बेंच पर बैठे थे, सिर उनका खिड़की से बाहर निकला हुआ था और वे बहुत गौर से आवाजें सुन रहे थे। मीश्का ने भी कान लगा दिये। रात के गहरे सन्नाटे में उसे गाँव के परे बार-बार गोली चलने की आवाज़

साफ़ सुनाई दी। उसके बाद तो गोलियों की बाढ़-सी दाग दी गयी।

"तड़ाक! तड़-तड़-तड़! तड़-तड़-तड़ाक!"

ऐसा लगता था मानो कोई कीलें ठोंक रहा हो।

मीश्का का दिल दहल उठा। वह दादा से जा लिपटा और उसने पूछा : ती "यह मेरे बापू गोली चला रहे हैं न?" दादा चुप हो गये और माँ फिर से विलाप करने लगी।

पौ फटने तक गोली चलती रही और उसके बाद सन्नाटा हो गया। मीश्का वहीं बेंच पर सिमट-सिमटकर लेट गया और बेचैन, बोझल और दुख की नींद सो गया। उजाला हुआ तो कार्यकारिणी समिति के कार्यालय की ओर घुड़सवारों का एक दल तेज़ी से आता दिखाई दिया। दादा ने मीश्का को जगाया और खुद बाहर भागे।

कार्यकारिणी समिति के आँगन में धुएँ का खम्भ-सा उठा और आग की लपलपाती हुई लपटें इमारतों की ओर बढ़ चलीं। सड़कों पर घुड़सवार घोड़े कुदाते फिर रहे थे। एक घुड़सवार घोड़ा कुदाता हुआ अहाते के पास आया और उसने पुकारकर दादा से पूछा :

“बूढ़े, घोड़ा है?"

"हाँ है...”

“जोतकर गाँव के बाहर चला जा! वहाँ झाड़ियों में तुम्हारे

कम्युनिस्ट पड़े हैं! जा, ले आ लादकर! सगे-सम्बन्धियों से कह देना उनकी मिट्टी ठिकाने लग जायेगी!"

दादा ने झटपट घोड़े को जोता, काँपते हाथों से लगामें सम्भाली और तेज़ी से अहाते के बाहर निकल गये।

गाँव में तो हाय-दुहाई मच गई। डाकू घोड़ों से उतरकर खलिहानों से सूखी घास निकाल लाये, भेड़-बकरियाँ काटने लगे। एक डाकू अनीसिमोना के अहाते के क़रीब घोड़े से नीचे कूदा और घर में जा घुसा। मीश्का ने अनीसिमोना को भर्राई आवाज़ में रोते-कलपते सुना। डाकू तलवार लिये हुए धड़ाधड़ बाहर आया, सीढ़ियों पर बैठ गया और उसने जूते उतारे। उसने अनीसिमोना के फूलदार और पर्वों के अवसरों पर पहने जाने वाले शॉल के दो टुकड़े किये, अपनी गन्दी पट्टियाँ उतारी और उनकी जगह उन्हें अपनी टाँगों पर लपेट लिया।

मीश्का कोठे में जाकर बिस्तर पर लेट गया। उसने सिर तकिये में गड़ा दिया और तभी उठा जब फाटक चरमरा उठा। भागा हुआ दरवाज़े पर गया। देखा कि दादा की दाढ़ी आँसुओं से तर है और वह घोड़े को अहाते के अन्दर ला रहे हैं।

पीछे छकड़े में एक आदमी नंगे पाँव पड़ा था। उसकी बाँहें फैली हुई थीं, छकड़ा जब हिचकोले खाता तो उसका सिर दायें-बायें टकराता और छकड़े के तख्तों पर गाढ़ा-गाढ़ा काला खून रिस रहा था...

मीश्का काँपते पैरों से छकड़े के क़रीब गया। उसने चेहरे पर नज़र

डाली जो तलवार के वारों से बिल्कुल टुकड़े-टुकड़े हुआ पड़ा था। दाँत बाहर निकले हुए थे, हड्डी समेत कटा हुआ गाल लटक रहा था और बाहर को निकली, खून से लथपथ आँख पर हिलती-डुलती हुई बड़ी-सी हरी मक्खी बैठी थी।

मीश्का नहीं पहचान पाया कि वह लाश किसकी है। वह डर से कुछ-कुछ काँप रहा था। उसने इस व्यक्ति की छाती को देखा, खून से तर-बतर नीली और सफ़ेद धारियों वाली जहाजी कमीज़ की ओर उसका ध्यान गया और वह इस तरह काँप उठा मानो किसी ने पीछे से उसकी टाँगों पर कसकर चोट की हो। फटी-फटी आँखों से उसने एक बार फिर उस निश्चल और स्याह पड़े हुए चेहरे को देखा और उछलकर छकड़े पर जा पहुँचा।

"उठो बापू! उठो मेरे प्यारे बापू!" वह छकड़े से नीचे गिर पड़ा, उसने भाग जाना चाहा मगर टाँगें जवाब दे गईं। हाथों-पैरों के बल रेंगता हुआ वह बड़ी मुश्किल से घर के दरवाज़े तक पहँचा और लुढक गया।

***

दादा की आँखें अन्दर को फँस गई थीं। सिर हिलता और हिचकोले खा रहा था, होंठ हिलते-डुलते थे, मगर उनसे कोई आवाज़ नहीं निकलती थी।

दादा देर तक चुपचाप मीश्का का सिर सहलाते रहे। फिर बिस्तर पर औंधी पड़ी हुई माँ की ओर देखते हुए उन्होंने फुसफुसाकर मीश्का से कहा :

"चल बेटे, बाहर अहाते में चलें..."

दादा ने मीश्का का हाथ थामा और दरवाज़े की ओर चले। कोठे का दरवाज़ा लाँघते हुए मीश्का ने आँखें मूंद लीं, वह सिहर उठा। कोठे में मेज़ पर बाप की लाश पड़ी थी, गुमसुम और गम्भीर। उसका खून धोकर साफ़ किया जा चुका था, मगर मीश्का अपनी आँखों के सामने शीशे की तरह पथराई और खून से सनी वही आँख देख रहा था जिसपर बड़ी हरी मक्खी बैठी थी।

दादा ने काफ़ी देर लगाकर कुएँ से रस्सी खोली, फिर अस्तबल की ओर गये और घोड़े को बाहर लाये। न जाने क्यों अपनी आस्तीनों से उन्होंने घोड़े के मुँह से झाग पोंछे। फिर उसे लगाम पहनाई और कान लगाकर बाहर की आवाजें सुनते रहे। गाँव में खूब शोर मचा हुआ था, ठहाके गूंज रहे थे। अहाते के क़रीब से दो घुड़सवार गुजरे, अँधेरे में उनकी सिगरेटों की चिंगारियाँ चमकीं और उनकी यह बातचीत सुनाई पड़ी :

"क्यों, कैसी रही, करवा दी न हमने भूखों में इनकी बँटाई!... अब दूसरी दुनिया में पहुँचकर याद करेंगे कि लोगों से अनाज छीनने का क्या नतीजा होता है!..."

घोड़ों की टापों की आवाज़ जब बिल्कुल बन्द हो गई तो दादा ने मीश्का के कान में धीरे से कहा :

"देख बेटे, मैं हूँ बूढ़ा आदमी... घोड़े की सवारी मेरे बस की बात नहीं... तुझे इसपर चढ़ा देता हूँ, तू भगवान का नाम लेकर

प्रोनीन गाँव को चला जा... रास्ता मैं तुझे दिखा दूंगा... वहाँ फ़ौज के वे जवान.पड़े होंगे जो बैण्ड बजाते हुए हमारे गाँव से गुजरे थे... उनसे कहना कि तुरन्त हमारे गाँव की ओर चले आयें-यहाँ डाकुओं का गिरोह है!... समझ गये?..."

मीश्का ने चुपचाप सिर हिलाकर हामी भरी। दादा ने मीश्का को घोड़े पर बिठाया, रस्सी से दोनों पाँव जीन के साथ बाँध दिये ताकि वह गिर न पड़े और खलिहान, तालाब और डाकुओं के अड्डे के क़रीब से होते हुए घोड़े को स्तेपी में लाये।

"देख बेटा, उस टीले की तरफ़ घाटी चली गयी है, उसके साथ-साथ घोड़ा चलाते जाना, इधर-उधर नहीं मुड़ना! सीधा गाँव में जा पहुँचेगा। अच्छा अब चल दे मेरे लाल!" दादा ने मीश्का को चूमा और घोड़े को धीरे से थपथपाया।

रात चाँदनी थी, उजली-उजली थी। घोड़ा हल्के कदमों से दौड़ने और नथने फुलाने लगा। पीठ के बोझ को हल्का महसूस करते हुए वह सम्भालकर कदम रखने लगा। मीश्का उसे लगाम छुआता जाता था, गर्दन थपथपाता था और धचकों से उछल-उछल जाता था।

अनाज की हरी घनी बालों के बीच बटेर मस्ती में चहक रहे थे। घाटी की तह में झरने का पानी अपना झर-झर का गीत अलाप रहा था। हवा में कुछ-कुछ सिहरन थी।

स्तेपी में अकेले होने से मीश्का को डर लगने लगा। उसने दोनों बाँहें घोड़े की गर्म-गर्म गर्दन के गिर्द डाल दी और उसका

ठिठुरता-काँपता बदन घोड़े से चिपक गया।

घाटी ऊपर की ओर जाती, नीचे ढलती और फिर ऊपर की ओर ऊँची उठती। मीश्का को पीछे की ओर देखने से डर लगता। वह कुछ फुसफुसाता हुआ यह प्रयत्न कर रहा था कि उसके दिमाग में किसी तरह का भयानक विचार न आये। सन्नाटा उसके कानों में सायँ-सायँ बज रहा था, उसने आँखें मूंद रखी थीं।

घोड़े ने सिर झटका, नथने फुलाये और कदम तेज़ कर दिये। मीश्का ने ज़रा-सी आँख खोलकर नीचे की ओर देखा। पहाडी के दामन में उसे मद्धिम रोशनियाँ दिखाई दीं। हवा के झोंकों के साथ कुत्तों के भौंकने की आवाज़ भी सुनाई दी।

घड़ी भर में खुशी के मारे मीश्का के दिल में गर्मी आ गई। उसने घोड़े को पैर से एड़ लगाई और टिटकारी भरी :

"टिच-ट-ट-ट!"

कुत्तों के भौंकने की आवाज़ निकट आ गई। टीले पर पवन चक्की के पंखों की धुंधली-सी रेखायें नज़र आईं।

"कौन जा रहा है यह?” पवन चक्की से आवाज़ आई। मीश्का ने फिर चुपचाप घोड़े से आगे बढ़ते रहने का आग्रह किया। ऊँघते हुए गाँव में मुर्गों की बाँग सुनाई दी।

“रुक जाओ!.. कौन जा रहा है?... गोली मार दूंगा!..."

मीश्का डर गया, उसने लगामें खींचीं। मगर घोड़े को क़रीब ही घोड़ों की उपस्थिति की गन्ध आ गई, वह ज़ोर से हिनहिनाया

और सवार की परवाह न करते हुए सरपट दौड़ चला।

"ठहरो!"

पवन चक्की के करीब से गोलियों की तड़तड़ सुनाई दी। मीश्का की चीख घोड़े की टापों की आवाज़ में डूब गई। घोड़े का दम फूल गया, वह पिछली टाँगों के बल खड़ा हुआ और दायें पहलू ढह पड़ा।

मीश्का अब अपनी टाँग में बहुत ही ज़ोर का, जानलेवा दर्द महसूस कर रहा था। चीख उसके होंठों पर जमकर रह गई। घोड़ा मीश्का की टाँग पर अधिकाधिक बोझ डालता गया।

घोड़ों की टापें क़रीब आईं। तलवारें बाँधे हुए दो सवार क़रीब पहुँचे, घोड़ों से कूदे और मीश्का पर झुक गये।

“हाय गजब हो गया, यह तो बेचारा कोई छोकरा है!"

“कहीं जान तो नहीं ले ली?!"

किसी ने कमीज़ के अन्दर हाथ ले जाकर मीश्का के दिल की धड़कन जाँची। मीश्का के मुँह के पास तम्बाकू के लहरे आ रहे थे। किसी ने खुश होते हुए कहा :

“यह जिन्दा है!... घोड़े ने कहीं टाँग न कुचल डाली हो?..."

बेहोश होता हुआ मीश्का फुसफुसाया :

“गाँव में गिरोह है... बापू को मार डाला... समिति का कार्यालय जला दिया, दादा ने कहा है आप फौरन वहाँ पहुँचे!"

मीश्का की धुंधलाती हुई आँखों के सामने रंगीन चक्कर-से घूमने लगे... अपने बापू को उसने सामने से गुजरते देखा, लाल मूंछों को मरोड़ते और हँसते हुए। मगर उसकी आँख पर एक बड़ी-सी झूलती हुई हरी मक्खी बैठी थी। फिर दादा सामने आये, सिर हिलाते और बिगड़ते हुए। इसके बाद माँ दिखाई पड़ी। सबके बाद उसके सामने उभरा छोटे कद का चौड़े माथेवाला व्यक्ति जिसका हाथ उठा था। उसका हाथ सीधे मीश्का की ओर इशारा कर रहा था।

“साथी लेनिन!...” मीश्का अपनी फटी-सी आवाज़ में पुकार उठा। ज़ोर लगाकर उसने सिर ऊपर उठाया, वह मुस्कराया और उसने अपने दोनों हाथ लेनिन की ओर बढ़ा दिये।

(अनुवाद: मदनलाल मधु)